प्राचीन भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी भाग-04

प्राचीन भारत में चिकित्साशास्त्र :

चिकित्सा के क्षेत्र में प्राचीन भारत की उपलब्धियाँ अपेक्षाकृत अधिक महत्वपूर्ण थी। भारत में इसका इतिहास वैदिक काल से शुरू होती है। ऋग्वेद में 'अश्विन्' को देवताओं का वैद्य माना गया है जो अपने पेशा में काफी निपुण थे।

'अथर्ववेद' को चिकित्साशास्त्र का जन्मदाता माना जाता है। इसे 'आंगिरस' या 'भिषग् वेद' भी कहते हैं। अथर्ववेद के नवें कांड का चौदहवां सूक्त रोगों का विस्तृत विवरण देता है। इसमें शीर्षक्ति और शीर्षामय (सिरदर्द), कर्णशूल (कान का दर्द), शीर्षण्य रोग (माथे का रोग) विलोहित (जिसमें चेहरा लाल पड़ जाता है), यक्ष्मा, अंगभेद (शरीर में ऐंठन एवं पीड़ा) अंगज्वर, पीलिया, अपचित (गंडमाल), जलोदर, अतिसार आदि रोगों एवं उनकी चिकित्सा का विधान मिलता है। रुधिर के प्रवाह को ले जानेवाली दोनों प्रकार के नसों तथा रक्तस्राव के समय इन्हें बांध देने का भी उल्लेख मिलता है।

अथर्ववेद से ही आयुर्वेदशास्त्र का जन्म हुआ। आयुर्वेद शब्द 'आयुष' तथा 'वेद' शब्दों से मिलकर बना है। आयुष का अर्थ जीवन होता है और 'वेद' का जानना। अतः आयुर्वेद शब्द का अर्थ हुआ - जीवन संबंधी ज्ञान या दीर्घायु प्राप्त करने का ज्ञान। अपामार्ग, पिप्पली और अरुन्धति - ये तीन सर्व प्रथम वनस्पतियां हैं जिनका उपयोग व्याधियों तथा कष्टों के निवारण में करना मनुष्य ने अत्यंत आदिमकाल में सीखा। ब्रह्मा आयुर्वेदशास्त्र के सर्वप्रथम प्रवर्तक थे। उनसे यह ज्ञान प्रजापति ने प्रजापति से अश्विनीकुमारों ने, अश्विनीकुमारों से इन्द्र ने सीखा। भरद्वाज प्रथम मर्त्य मानव था जिसने इन्द्र से आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त किया। आगे चलकर सब प्राणियों पर अनुकम्पा के विचार से 'पुनर्वसु' ने यह आयुर्वेदज्ञान अपने 6 शिष्यों को दिया। ये शिष्य - अग्निवेश, भेल, जतूकर्ण, पराशर, हारीत और क्षारपाणि थे। इनमें अग्निवेश विशेष प्रतिभाशाली थे और वे ही आयुर्वेद तंत्र का प्रथम संकलनकर्ता माने गये। अथर्ववेद के एक सूक्त में यह उल्लेख मिलता है कि मनुष्य ने पशुओं से प्रेरणा प्राप्त कर औषधिशास्त्र सीखा। पशुओं में एक प्रवृत्ति प्रेरणा होती है जिससे वे अपने कष्ट के समय अपने चारों ओर प्राप्त वनस्पतियों का सेवन करते हैं। आयुर्वेद के आचार्यों ने औषधियों का आविष्कार तुल्य गुणों के आधार पर किया जैसे अगर कोई चीज लाल है और

Scanned with CamScanner

घुलने पर लाल रंग देती है, तो उन्होंने समझा कि यह रक्त शोधक है और रक्तस्राव को भी रोका करेगी।

बौद्धसाहित्य में 'जीवक' नाम के चिकित्सक की जानकारी मिलती है। जीवक का जन्म राजगृह में हुआ था परंतु आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त करने के लिए वह तक्षशिला (गांधार देश) गये थे। राजगृह लौटकर बिम्बिसार का राजवैद्य बना तथा बिंबिसार, चंडप्रद्योत एवं गौतम बुद्ध का वह इलाज किया था।

भारतीय चिकित्सा पद्धति के विकास में बौद्धों का बड़ा हाथ है। बौद्ध विहारों में चिकित्सालय होते थे जहाँ बौद्ध भिक्षु रोगियों का इलाज करते थे। सम्राट अशोक ने भी अपने राज्य में बहुत से चिकित्सालय खोले थे तथा पड़ोसी देशों में वैद्य भेजे थे। बौद्ध धर्म के साथ विदेशों में भारतीय चिकित्सा ज्ञान का व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ। यह मध्य एशिया होते हुये चीन तक पहुँचा।

अर्थशास्त्र से हमें मौर्यकाल में चिकित्सीय विकास की जानकारी मिलती है। इसमें साधारण वैद्यों, चीड़-फाड़ करनेवाले भिषजों, प्रयुक्त होनेवाले यंत्रों, परिचारिकाओं, महिला चिकित्सकों आदि की जानकारी मिलती है। शव परीक्षा भी किया जाता था।

चिकित्सा क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति दूसरी सदी ई. में चरक एवं सुश्रुत जैसे प्रसिद्ध आचार्यों के उदय से हुई। चरक एक शाखा का नाम है जिसकी विस्तृत चर्चा यजुर्वेद में मिलती है। गांधार के इलाके में चरक शाखा के लोग रहते थे जो चिकित्सीय कार्य में काफी निपुण थे। इसी शाखा का वैद्य चरक कनिष्क का राजवैद्य था। इसी चरक ने चिकित्सा विज्ञान का ग्रंथ 'चरकसंहिता' की रचना की यह कहना मुश्किल है। चरकसंहिता का क्षेत्र 'काय चिकित्सा' है। यह भारतीय औषधिशास्त्र का विश्वकोष है। चरकसंहिता का उल्लेख बाणभट्ट ने अपनी 'कादम्बरी' में किया है तथा अलबरूनी ने इसे औषधि का 'सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ' माना है।

'चरकसंहिता' संस्कृत भाषा में लिखा हुआ गद्य-पद्य मिश्रित ग्रंथ है। इसमें 8 स्थान तथा 120 अध्याय है। ये स्थान है (1) सूत्रस्थान (30 अध्याय) (2) निदानस्थान (8 अध्याय) (3) विमानस्थान (8 अध्याय) (4) शारीरस्थान (8 अध्याय) (5) इन्द्रियस्थान (12 अध्याय) (6) चिकित्सा स्थान (30 अध्याय) (7) कल्पस्थान (12 अध्याय) (8) सिद्धिस्थान (12 अध्याय)। चरकसंहिता काफी बड़ा ग्रंथ है। उस समय तक काय-

Scanned with CamScanner

चिकित्सा के बारे में जितनी बातें जानी गई थी, उन सबका उल्लेख इस पुस्तक में मिलता है। इस ग्रंथ में 36 प्रकार के घावों का वर्णन, 96 प्रकार के नेत्ररोग, 28 प्रकार के कर्णरोग, 31 प्रकार के नासारोग, 11 प्रकार के शिरोरोग, 65 प्रकार के मुखरोग के अलावे, ज्वर, कुष्ठ, मिरगी, यक्ष्मा आदि जैसे प्रमुख आठ रोगों के रोगोपचारों का विस्तृत विवरण मिलता है। इसके अलावे शरीर रचना, गर्भ-स्थिति, शिशु का जन्म एवं विकृत मानसिक व्याधियों, आहार आदि से संबंधित जानकारी भी प्रदान की गई है। इस संहिता में नकली दाँत लगाने का उल्लेख है साथ ही चरक ने वनस्पतिशास्त्र (Botany) को भी अपने विवेचन का विषय बनाया है। औषधियों में काम आनेवाले 600 से अधिक पौधों (जड़ी-बूटियों) को चरक ने सुव्यवस्थित किया एवं उनसे बनानेवाली औषधियों का वर्णन किया है। इसमें आरोग्यशाला का निर्माण तथा इसकी व्यवस्था के बारे में बढ़िया जानकारी मिलती है। इसके अलावे आयुर्वेद के अध्ययन के लिए आवश्यक गुरु एवं शिष्य के गुणों का चरक संहिता में अच्छा विवेचन मिलता है। चरक संहिता में इस बात की जानकारी दी गई है कि चिकित्सा का पेशा अपनानेवाले वैद्य अपने पेशे के प्रति वफादार बने रहने के लिए किस प्रकार शपथ लेंगे। यह आधुनिक जमाने में भी प्रचलित है।

सब बातों पर विचार करने से पता चलता है कि उस जमाने में चिकित्साशास्त्र का ज्ञान अन्य विधाओं से काफी ज्यादा विकसित थी। इसके कई कारण थे जिनमें चिकित्साशास्त्र विषय का धर्म से अलग होना यह एक अनुभवजन्य एवं प्रायोगिक विज्ञान था। चिकित्सीय पेशा केवल ब्राह्मण-पुरोहित तक सीमित नहीं रहा बल्कि समाज के कोई भी व्यक्ति इसे अपना सकता था।

शल्यचिकित्सा (Surgery) के विकास का श्रेय 'सुश्रुत' को जाता है जिन्होंने इस विधा का अध्ययन और अभ्यास काशी में किया होगा। वे विश्वामित्र के पुत्र (महाभारत, अनुशासनपर्व, अध्याय-4) थे तथा गुरु धन्वन्तरि ने उपदेश दिया। सुश्रुत दूसरी शताब्दी में आयुर्वेद के विद्वान थे तथा उनके द्वारा रचित ग्रंथ 'सुश्रुत संहिता' काफी प्रसिद्ध है जिसमें नवीन तथ्यों को जोड़ने का सिलसिला 10वीं सदी तक चलता रहा।

सुश्रुत संहिता में 120 अध्याय है। अध्यायों की यह संख्या मनुष्यों की आयु 120 वर्ष मानकर की गयी है। इन्हें पाँच स्थानों में बाँटा गया है - सूत्रस्थान, निदानस्थान, शारीरस्थान, चिकित्सास्थान और कल्पस्थान। इसके अलावा सुश्रुत संहिता के परिशिष्ट में उत्तरतंत्र

Scanned with CamScanner

भी जोड़ा गया है जिसमें 66 अध्याय है। चरक संहिता की तरह यह ग्रंथ भी गद्य-पद्य में लिखित है। इस महान ग्रंथ के आरम्भ में बताया गया है कि चिकित्सा-छात्रों को किस प्रकार कुम्हड़ा, लौकी, तरबूज आदि को बारीकी से काट-काटकर शल्यक्रिया का अभ्यास करना है। आचार्य सुश्रुत लोम के फुतलों, फलों, मरे हुये जानवरों का प्रयोग करके छात्रों को शल्य क्रिया का ज्ञान देते थे। सूत्र स्थान के 7वें और 8वें अध्याय में यंत्रों तथा शस्त्रों के बारे में जानकारी दी गई है।

यंत्रों की संख्या 101 बतलाई गयी है जिसमें हाथ को ही मुख्य यंत्र माना गया है। आकृतियों के अनुसार यंत्रों को 6 प्रकारों में बाँटा गया है। इनमें स्वास्तिक यंत्र-24, संदेश यंत्र-2, तालयंत्र-2, नाड़ीयंत्र-20, शलाका यंत्र-28 और उपयंत्र-24 थे। काटने, चीरने के तीक्ष्ण उपकरण थे। यंत्र का अर्थ सामान्यतः चिमटी, संड़सी, जैसे कुंद औजार (Blunt instruments) है। चाकू, सुई, कैंची, आदि आदि शस्त्र है। यंत्र मुख्यतः लोहे के बने होते थे तथा विभिन्न पशु तथा पक्षियों के मुंह के आकार के होते थे। इनके मुख सिंह, भेड़िये, चीते, कौवे आदि जैसे होते थे। संदेशयंत्र सड़सियां तथा चिमटियां होते थे। इनसे त्वचा, मांस, शिरा आदि को खींचा जाता था। तालयंत्र चम्मच आकार के होते थे और इनसे नाक, कान आदि का मल निकाला जाता था। नाड़ीयंत्र खोखले होते थे और कण्ठ, मगदर आदि की पीड़ा में इनका इस्तेमाल होता था।

चीरने, फाड़ने या काटने के लिए शस्त्रों का इस्तेमाल होता था सुश्रुत संहिता में शस्त्रों की संख्या 20 बतलाई गयी है। मण्डलाग्र करपत्र, मुद्रिका, व्रीहिमुख आदि इनके नाम है। इन शस्त्रों से फल-कंदमूल, साग-सब्जियां पर काटने छेदने आदि के विविध प्रयोग करके शल्यक्रम सीखने की जानकारी दी गई है। खून निकालने के लिए जोंक के इस्तेमाल की जानकारी दी गयी है।

आगे शारीरस्थान में शवच्छेदन के बारे में जानकारी दी गयी है। इसके लिए किसी अच्छे शव को प्राप्त करके उसे पिंजड़े में बंद कर नदी के बहते जल में सात दिन तक रख दिया जाता था। फिर मुलायम कूचियां से खुरचकर उस शव की परीक्षा की जाती थी। प्राचीन भारत में प्रत्यक्ष एवं प्रायोगिक ज्ञान को इतना महत्व दिया जाना सचमुच एक अद्भुत बात है।

उस समय निरंतर लड़ाइयां होती रहती थी इसीलिए

Scanned with CamScanner

सेना के साथ शल्य चिकित्सकों का होना जरूरी माना गया था। सैन्य शल्य चिकित्सा की जानकारी के लिए सुश्रुत संहिता में 'युद्ध सेनीय' नाम से एक अध्याय है। सुश्रुत संहिता के सूत्रस्थान के 16वें अध्याय में कान, नाक की प्लास्टिक सर्जरी के बारे में जानकारी दी गई है। इसमें कपोल या शरीर के मुलायम अंग से मांस काटकर नाक बनाने की चर्चा है। इसप्रकार 'प्लास्टिक सर्जरी' भारत की खोज है। मध्य-युग में इसका ज्ञान इटली आदि यूरोपीय देशों को पहुँचा। फिर 18वीं सदी में के अंतिम दशक में ईस्ट इंडिया कम्पनी के दो डॉक्टरों ने महाराष्ट्र के वैद्य द्वारा नाक की प्लास्टिक सर्जरी करते देखा जिसे लंदन की एक पत्रिका में प्रकाशित भी किया गया। तदुपरांत ही यूरोप में प्लास्टिक सर्जरी का विकास तेजी से हुआ।

स्वास्थ्य का आदर्श लक्षण सुश्रुत की देन है। कुष्ठ, ज्वर, शोष (यक्ष्मा रोग) को छूत की बीमारी प्रथम बार सुश्रुत ने ही बताया। वायु और जल के शोधन की विधि इसमें सविस्तार वर्णित है। इस संहिता के 24वें अध्याय में बीमारी का वर्गीकरण विस्तार से मिलता है। रोगों के साथ-साथ विशिष्ट औषधियों का भी इस ग्रंथ में उल्लेख मिलता है।

इसप्रकार हम देखते हैं कि सुश्रुत संहिता शल्य चिकित्सा का एक क्लासिक ग्रंथ है। भारत के इस महान् रचना का लाभ पूरे विश्व ने उठाया। 800 ई. में ही सुश्रुत संहिता का अनुवाद अरबी भाषा में हो गया था और 'किताबे सुश्रुत' नाम से यह ज्ञान पश्चिम में पहुँच गया। 9वीं-10वीं सदी में ईरान के महान चिकित्सक राजी ने सुश्रुत को महान् चिकित्सक माना। सोवियत चिकित्साशास्त्री पेत्रोव के अनुसार रूस की प्राचीन चिकित्सा-पुस्तकों में भारत की वनस्पति एवं खनिज औषधियों का उल्लेख मिलता है।

चिकित्साशास्त्र में 'अष्टांग-संग्रह' और 'अष्टांग-हृदय' ग्रंथ काफी प्रसिद्ध है। ये दोनों ग्रंथों के रचयिता 'वाग्भट्ट' है। इन दोनों ग्रंथों की रचनाकार एक है या अलग इसको लेकर विवाद है। सम्भवतः यही जान पड़ता है कि वाग्भट्ट दो हुये। अष्टांग संग्रह गद्य-पद्य में लिखित है और अष्टांग-हृदय केवल पद्य में होने के कारण अष्टांग-हृदय को काफी प्रसिद्धि मिली तथा इस ग्रंथ का तिब्बती भाषा में भी अनुवाद हुआ था (11वीं सदी में)। इस पर 35 से भी अधिक टीकाएँ लिखी गई।

Scanned with CamScanner

ये दोनो ग्रंथ मुख्यतः चरक संहिता और सुश्रुत-संहिता पर आधारित है पर इनमें कुछ नई जानकारी भी है। रचनाकार की तरह रचनाकाल को लेकर भी विवाद है। ऐसा प्रतीत होता है कि इनकी रचना आठवीं सदी में हुई। इत्सिंग ने भी वृद्ध वाग्भट (अष्टांग संग्रह) का अपने लेख में उल्लेख किया है।

वाग्भट के बाद भी हमारे देश में कुछ ग्रंथों की रचना हुई पुराने ग्रंथों पर बहुत सी टीकाएँ भी लिखी गई किंतु उनमें नवीनता नहीं है।

प्राचीनकाल में युद्ध में हाथियों तथा घोड़ो का काफी महत्व था। इसीलिए इनसे संबंधित ग्रंथ भी लिखे गये। "पालकाप्य" नामक पशुचिकित्सक ने "हस्त्यायुर्वेद" नामक ग्रंथ की रचना की जो हाथियों के रोगों एवं चिकित्सा से संबंधित है। इस ग्रंथ की योजना भी आयुर्वेद के अन्य संहिताओं की तरह है।

"शालिहोत्र संहिता" में मुख्यतः घोड़ों के रोग के इलाज के बारे में जानकारी मिलती है। अश्व चिकित्सा पर नकुल एवं जयदत्त की लिखी हुई पुस्तकें भी मिलती है। हमारे देश में पशुचिकित्सा की परम्परा पुरानी है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी पशु चिकित्सकों तथा हस्ति चिकित्सकों के बारे में जानकारी मिलती है। सम्राट अशोक ने भी पशुओं की चिकित्सा का अच्छा प्रबंध किया था।

प्राचीनकाल में हमारे देश में पेड़-पौधों की चिकित्सा का भी विकास हुआ है। इस चिकित्सा को "वृक्षायुर्वेद" कहते थे। आयुर्वेद-चिकित्सा में वनस्पति का खूब इस्तेमाल होता था इसीलिए इस विद्या को "भेषज-विद्या" भी कहते थे। आज वृक्षायुर्वेद का कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं मिलता किंतु बहुत सारे प्राचीन ग्रंथों में इसकी जानकारी मिलती है। बाद में "निघंटु" नाम से कई वनस्पति-कोश तैयार किये गये थे।

[क्रमशः जारी]

Scanned with CamScanner